दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

निर्णय की तिथि: 29.01.2010

<u>रि.या.(सि.) सं. 16559/2006</u>

मैसर्स सेसम फूड प्राइवेट लिमिटेड ..... अपीलार्थी

द्वारा: श्री अर्जुन मित्रा, अधिवक्ता।

बनाम

भारत संघ व अन्य .....प्रत्यर्थी

द्वारा: श्री एस.के. दुबे, श्री रितेश कुमार, श्री अक्षय सिंह और श्री वंशदीप डालमिया, प्र.-1, प्र.-2 और प्र.-5 के अधिवक्ता। श्री अभिषेक कुमार, प्र.-7 के अधिवक्ता। सुश्री हृषिका पंडित के साथ श्री सतीश अग्रवाल प्र.-3 और प्र.-4 की अधिवक्ता।

कोरमः

माननीय न्यायाधीश डॉ. एस. मुरलीधर

1. क्या स्थानीय समाचार पत्रों के संवाददाताओं को
   निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है? नहीं
2. रिपोर्टर के पास भेजा जाना है या नहीं? हां
3. क्या निर्णय की सूचना डाइजेस्ट में दी जानी चाहिए हां

<u>आदेश</u>

02.02.2010

<u>रि.या.(सि.) सं.16559/2006 और सि.वि. सं.13554/2006 (रोकने के लिए), 15654/2007 (निर्देश के लिए) 1059/ 2008 और 7583/2008</u>

1. याचिकाकर्ता, जो एक निर्यात उन्मुख इकाई ("ई.ओ.यू.") है, जिसका कार्यालय अंसल भवन, कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली में है, ने प्रत्यर्थियों द्वारा 15/16 फरवरी, 28 फरवरी, 19 अप्रैल और 18 सितंबर 2006 को जारी किए गए आक्षेपित आदेश को चुनौती दी, जिसमें रु.3,22,91,926/- की राशि वसूलने की मांग करते हुए कहा गया है कि यह अतिरिक्त भुगतान की गई शुल्क वापसी की राशि है।

2. 18 मई 1999 के एक अनुमति पत्र के अनुसार याचिकाकर्ता को 2002-07 की अवधि के लिए निर्यात और आयात नीति ("निर्यात-आयात नीति") के अनुसार

तिल के उत्पादन और निर्यात के लिए मंजूरी दी गई थी। याचिकाकर्ता का कहना है कि इसकी मंजूरी 2011 तक थी।

3. याचिकाकर्ता के अनुसार ई.ओ.यू. से काम करने वाले निर्यातकों को कुछ रियायतें दी जाती हैं ताकि वे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्धा कर सकें। याचिकाकर्ता द्वारा निर्मित वस्तुएँ, जिनका कच्चा माल घरेलू शुल्क क्षेत्र ("डी.टी.ए.") से प्राप्त किया गया है, शुल्क वापसी के लाभ के पात्र हैं। याचिकाकर्ता का दावा है कि वह निर्यात किए गए उत्पादों के निर्माण में किए जाने वाले निवेश पर सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क दोनों के अनुरूप राशि की वापसी/छूट का हकदार है। विशेष रूप से, याचिकाकर्ता आयात-निर्यात नीति के 6.12 (क) पर निर्भर करता है जिसमें कहा गया है कि "डी.टी.ए. से ई.ओ.यू. को आपूर्ति को "मानित निर्यात" माना जाएगा और डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ता पर निर्यात दायित्व, यदि कोई हो, के निर्वहन के अलावा नीति के अध्याय 8 के तहत प्रासंगिक हक के लिए पात्र होगा। इसके अलावा, उपरोक्त के बावजूद, ई.ओ.यू. इकाइयाँ, डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ता से एक उपयुक्त अस्वीकृति प्रस्तुत करने पर, नीति के अध्याय 8 में निर्दिष्ट पात्रता प्राप्त करने के पात्र होंगी।" उक्त धारा में आगे यह प्रावधान किया गया है कि मानित निर्यात शुल्क की वापसी का दावा करने

के उद्देश्य से, ई.ओ.यू. को विकास आयुक्त द्वारा तय ब्रांड दरें मिलेंगी, जहां सभी उद्योगों की आयात कर वापसी दरें उपलब्ध नहीं हैं।"

4. याचिकाकर्ता ने 30 दिसंबर 2003 को प्रत्यर्थी संख्या 2, विदेश व्यापार महानिदेशक ("डीजीएफटी") को निर्यात-आयात नीति 2002-07 के पैरा 8.3 (ख) के तहत "निर्यात माने गए तिल" पर शुल्क वापसी की दर निर्धारित करने के लिए एक आवेदन दिया। निर्यात-आयात नीति की धारा 8.3 (ख) में प्रावधान है कि मानित निर्यात वापसी मानित निर्यात शुल्क वापसी के लिए पात्र होगी। यह कहा गया है कि 25 मई 2004 को याचिकाकर्ता ने सभी दावों के लिए मूल भुगतान प्रमाण पत्र और अस्वीकरण उपायुक्त, नोएडा विशेष आर्थिक क्षेत्र ("नो.वि.आ.क्षे."), प्रतिवादी संख्या 3 के कार्यालय में प्रस्तुत किए। याचिकाकर्ता के बैंकरों यानी, भारतीय स्टेट बैंक (एस.बी.आई.) ने भी 8 जून 2004 के पत्र द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा किए गए वापसी के दावों की स्थिति के बारे में नो.वि.आ.क्षे. से स्पष्टीकरण मांगा है। 16 जून 2004 को एक पत्र द्वारा नो.वि.आ.क्षे. ने निर्यात शुल्क वापसी के लिए याचिकाकर्ता के दावों के बारे में सवाल उठाए। याचिकाकर्ता से यह बताने के लिए कहा गया था कि कैसे याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत किए गए दावों में शुल्क का भुगतान शून्य किया गया था, लेकिन शुल्क का दावा एफ.ओ.आर. के 30 प्रतिशत और 20 प्रतिशत पर किया गया था।

5. 16 जून 2004 को याचिकाकर्ता ने नो.वि.आ.क्षे. को निम्नलिखित रुख अपनाते हुए जवाब दियाः

> "(i) कि माल न तो याचिकाकर्ता द्वारा सीधे आयात किया गया था और न ही यह लागू नीति के तहत एक पूर्व-आवश्यकता थी;
> (ii) दावा किया गया शुल्क डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ता से प्राप्त किया गया था और लागू आयात-निर्यात और विदेश व्यापार नीति के अनुसार इसे आयात माना गया है।
> (iii) दावा किया गया शुल्क भारतीय निर्यात संगठन महासंघ (एफ.आईईओ) द्वारा उनके पत्र संख्या एफआईईओ/ईपी 10(2)/04 दिनांक 16-6-2004 (उपाबंध ठ) द्वारा पुष्टि किए गए शुल्क के आधार पर प्रभार्य शुल्कों पर आधारित था।
> (iv) यद्यपि भुगतान किए गए शुल्क को शून्य के रूप में दिखाया गया है, लेकिन दावे भुगतान किए जाने वाले वास्तविक आयात शुल्क पर आधारित नहीं थे, बल्कि ईओयू की जरूरतों को पूरा करने के लिए मानित आयातित वस्तुओं के लिए समानता के उद्देश्यों के लिए तैयार किए गए मानित आयात मूल्य पर आधारित थे।
> (v) याचिकाकर्ता को न तो आयात पत्र /आयात चालान न ही कोई शुल्क भुगतान दस्तावेज़ जमा करने की आवश्यकता थी जैसा कि पूछा गया था।"

6. रिट याचिका के पैरा 15 में कहा गया है कि "चूंकि याचिकाकर्ता ने तिल का निर्यात किया है, इसलिए उसने तिल के आयात पर लगाए जाने वाले सीमा शुल्क के संबंध में शुल्क वापसी का दावा किया था।" यह आगे दावा किया जाता है कि याचिकाकर्ता "सीमा शुल्क के तहत लागू सीमा शुल्क के शुल्क वापसी का हकदार है, भले ही बीज आयात शुल्क का भुगतान करके वास्तविक आयात से प्राप्त किए गए थे या वे घरेलू बाजार से प्राप्त किए गए थे।" याचिकाकर्ताओं ने दावा किया कि उन्हें पहले ही डी.जी.एफ.टी. द्वारा हाई स्पीड डीजल ("एच.एस.डी.") पर ईंधन के मूल्य पर सीमा शुल्क नियमावली के अनुसार जहाज पर निःशुल्क ("एफ.ओ.बी".) मानित निर्यात की छूट दी जा चुकी है। उन्होंने तिल पर भी उसी के सामान निर्यात शुल्क वापसी अनुदान की मांग की।

7. याचिकाकर्ताओं के प्रतिनिधित्व के आधार पर विकास आयुक्त ने 4 अक्टूबर 2004 के पत्र के माध्यम 1 अक्टूबर 2001 से 31 मार्च 2002 की अवधि के लिए ब्रांड दर और शुल्क वापसी की राशि 168.12 लाख रुपये तय की (जबकि कुल राशि 439.80 रुपये थी), जो याचिकाकर्ता द्वारा दावा किया जाता है। इसी तरह 1 अप्रैल 2001 से 30 सितंबर 2001 की अवधि के लिए शुल्क वापसी रु.61.89 लाख तय किया गया था। अप्रैल 2002 से सितंबर 2002 की अवधि के लिए रु.39,76,077, अक्टूबर 2002 से मार्च 2003 तक के लिए रु.90,06,466/-

और अप्रैल 2004 से सितंबर 2004 तक के लिए रु.24,97,129/-। उपरोक्त राशि का भुगतान याचिकाकर्ता को कर दिया गया था। चूंकि उपरोक्त भुगतान याचिकाकर्ता द्वारा किए गए दावे से कम थे, इसलिए उसने 17 जनवरी 2005 को एक व्यपदेशन दिया। 5 अगस्त 2005 को डी.जी.एफ.टी. ने याचिकाकर्ता को लिखा कि इस मामले पर राजस्व शुल्क वापसी निदेशालय विभाग के परामर्श से विचार किया गया है। केंद्रीय उत्पाद शुल्क और सीमा शुल्क बोर्ड द्वारा की गई टिप्पणियों पर भी विचार किया गया था। यह बताया गया कि "मानित निर्यात" के लिए अर्हता प्राप्त करने के लिए प्राथमिक शर्त यह है कि माल का निर्माण भारत में किया जाना चाहिए और "मौजूदा मामले में डी.टी.ए. द्वारा आपूर्ति किए गए तिल का निर्माण भारत में नहीं किया गया था और आयात किया गया था।" यह इंगित किया गया था कि आयात पत्र की फोटोकॉपी याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत नहीं की गई थी और इसलिए, शुल्क भार स्थापित नहीं की जा सकी थी।

8. याचिकाकर्ता के अनुसार आयात शुल्क वापसी की परिभाषा शुल्क भार के प्रमाण को अनिवार्य नहीं करती है। हालाँकि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में वस्तुओं की बिक्री को लेकर अभी तक कोई विवाद नहीं था। याचिकाकर्ता ने भुगतान किए गए दावों के आधार पर बैंकों, वित्तीय संस्थानों और आयातकों के प्रति प्रतिबद्धता व्यक्त की है। यह कहा गया है कि 15/16 फरवरी 2006 को

याचिकाकर्ता के 21 दिसंबर 2005 के व्यपदेशन के संदर्भ में डी.जी.एफ.टी. से एक सुचना प्राप्त हुआ था कि "चूंकि शुल्क भार के भुगतान को मंजूरी नहीं दी गई है, इसलिए आप निर्यात पर शुल्क वापसी माने जाने के हकदार नहीं हैं।" इसके बाद 28 तारीख का एक पत्र आया। इसके बाद 28 फरवरी 2006 को नो.वि.आ.क्षे. द्वारा एक पत्र जारी किया गया, जिसमें याचिकाकर्ता को निर्यात शुल्क वापसी के रूप में अतिरिक्त भुगतान की गई रु.3,22,91,926/- की राशि वापस करने के लिए कहा गया। याचिकाकर्ता को याद दिलाया गया कि उसने अपने द्वारा हस्ताक्षरित एक घोषणा/वचन पत्र प्रस्तुत किया था जिसमें "अधिक प्राप्त शुल्क वापसी की राशि की तत्काल वापसी और कोई भी राशि/दर जो सत्यापन के बाद सरकार द्वारा फिर से निर्धारित की जा सकती है" प्रदान की गई थी। याचिकाकर्ता ने 2 मार्च 2006 को एक व्यपदेशन दिया जिसे 19 अप्रैल 2006 को डी.जी.एफ.टी. द्वारा खारिज कर दिया गया था। 21 अप्रैल 2006 को एक और व्यपदेशन को 1 मई 2006 को संयुक्त विकास आयुक्त, नो.वि.आ.क्षे. द्वारा जारी एक पत्र द्वारा खारिज कर दिया गया था, जिसमें एक बार फिर 3,22,91,926 रुपये की मांग की गई थी। 18 सितंबर 2006 को इसी आशय की एक और मांग द्वारा इसे दोहराया गया था।

9. 28 सितंबर 2006 को याचिकाकर्ता को प्रत्यर्थियों द्वारा फिर से सूचित किया गया कि तिल किसी भी शुल्क वापसी लाभ के हकदार नहीं हैं क्योंकि उस पर शुल्क भार स्थापित नहीं की जा सकती है और इसलिए वर्ष 1 अप्रैल 2003 से 30 सितंबर 2003 और 1 अक्टूबर 2003 से 31 मार्च 2004 के लिए भेजे गए शुल्क वापसी के दावे अस्वीकार्य थे। उपरोक्त परिस्थितियों में ही वर्तमान याचिका दायर की गई है।

10. 8 नवंबर 2006 को प्रत्यर्थियों को नोटिस जारी करने का निर्देश देते हुए एक अंतरिम आदेश पारित किया गया था जिसमें प्रत्यर्थियों को उपरोक्त पत्रों में प्रदर्शित राशि की वसूली के लिए कदम उठाने से रोका गया था।

11. प्रत्यर्थियों द्वारा दायर प्रति-शपथपत्र में, हालांकि इस बात से इनकार नहीं किया गया है कि याचिकाकर्ता एक ई.ओ.यू. और तिल के निर्यातक है और याचिकाकर्ता ने डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं से अपना कच्चा माल खरीदा है, यह बताया गया है कि याचिकाकर्ता डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं से अस्वीकरण प्रस्तुत करके शुल्क वापसी का दावा कर रहा था। याचिकाकर्ता ने डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं से खरीदी गई उक्त वस्तुओं पर शुल्क भार का प्रमाण नहीं दिया था और "हर समय वह व्यपदेशन कर रहा था कि चूंकि डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं द्वारा आपूर्ति किया गया कच्चा माल उसके द्वारा आयात किया गया था, इसलिए माल पर

सीमा शुल्क लगा होना चाहिए जैसा कि सीमा शुल्क में दिखाया गया है।" यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के आवेदन पर शुल्क वापसी की ब्रांड दरें तय की गई थीं और राशि याचिकाकर्ता को वितरित की गई थी क्योंकि याचिकाकर्ता ने पूरे समय यह व्यपदेशन किया था कि डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ता से उसके द्वारा खरीदा गया कच्चा माल स्वयं आपूर्तिकर्ताओं द्वारा आयात किया गया था और शुल्क का भुगतान उसी पर किया जाना चाहिए था। याचिकाकर्ता द्वारा 27 अक्टूबर 2004 को इस आशय की एक घोषणा भी प्रस्तुत की गई थी। इसके अलावा संवितरण के समय याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थियों को निर्यात शुल्क वापसी का अतिरिक्त भुगतान किए जाने की स्थिति में क्षतिपूर्ति करने का वचन दिया था। ऐसा प्रतीत होता है कि 18 मार्च 2005 को नो.वि.आ.क्षे. ने डी.जी.एफ.टी. को पत्र लिखकर ब्रांड दर तय करने में कठिनाई व्यक्त की थी और तिल के लिए इसे ठीक करने के लिए एक कार्यप्रणाली का सुझाव देने के लिए कहा था। 5 अगस्त 2005 के अपने पत्र में डी.जी.एफ.टी. ने नो.वि.आ.क्षे. को सूचित किया कि चूंकि डी.टी.ए. द्वारा याचिकाकर्ता को आपूर्ति की गई वस्तुओं का निर्माण भारत में नहीं किया गया था, इसलिए उसे "मानित निर्यात" नहीं माना जा सकता था और इसलिए वाणिज्य विभाग से स्पष्टीकरण मांगा गया था। वाणिज्य विभाग ने अपने 14 अक्टूबर 2005 के पत्र द्वारा नो.वि.आ.क्षे. को सूचित किया कि

चूंकि याचिकाकर्ता ने उत्पाद के आयात किए जाने का कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया था, इसलिए शुल्क वापसी का कोई दावा स्वीकार्य नहीं था।

12. इस बीच प्रत्यर्थियों ने याचिकाकर्ता द्वारा किए गए दावों में कई विसंगतियों और झूठ का पता लगाया। यह पता चला कि याचिकाकर्ता द्वारा कई डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं को उनके माल के लिए भुगतान नहीं किया गया था और वे अपनी शिकायत के निवारण के लिए नो.वि.आ.क्षे. से संपर्क कर रहे थे। याचिकाकर्ता द्वारा आपूर्तिकर्ताओं के भुगतान के प्रमाण के रूप में प्रस्तुत बैंक विवरण वैधानिक प्रारूप में नहीं था, जिसके लिए आपूर्तिकर्ता के बैंकर द्वारा प्रपत्र का पृष्ठांकन करने की आवश्यकता थी, जबकि याचिकाकर्ता के प्रपत्र का पृष्ठांकन उसके अपने बैंकर द्वारा किया गया था। याचिकाकर्ता के बैंकर एस.बी.आई. से मांगे गए स्पष्टीकरण का कोई जवाब नहीं मिला था। प्रति-शपथपत्र के साथ प्रत्यर्थियों ने 3 जनवरी 2007 के पत्र और राजकोट के मैसर्स अमी ट्रेडर्स और मैसर्स चंद्राना एंड ब्रदर्स दोनों द्वारा 31 जनवरी 2007 को जारी किए गए शपथपत्रों को संलग्न किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ कहा गया था कि उन्होंने याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत अस्वीकरण प्रमाण पत्र तैयार नहीं किए थे, हालांकि उसमें दिखाए गए हस्ताक्षर उनके समान थे। यह कहा गया था कि चूंकि तिल स्थानीय मंडी से खरीदे गए थे, इसलिए कोई सीमा शुल्क दस्तावेज प्रदान

करना संभव नहीं था। प्रत्यर्थियों ने प्रति-शपथपत्र के साथ कृषि उपज बाजार समिति (कृ.उ.बा.स.), राजकोट का 3 जनवरी 2007 का एक पत्र भी संलग्न किया है जिसमें कहा गया है कि उनकी जानकारी के अनुसार गुजरात राज्य में तिल का कोई आयात नहीं हुआ है क्योंकि राज्य में स्थानीय रूप से उगाए जाने वाले तिल प्रचुर मात्रा में हैं।"

13. याचिकाकर्ता के प्रत्युत्तर शपथपत्र में अन्य बातों के साथ-साथ यह तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ मैसर्स अमी ट्रेडर्स द्वारा दायर एक आपराधिक मामले को उनके द्वारा राजकोट के न्यायिक मजिस्ट्रेट की अदालत में निपटान किया गया था। इसके अलावा मैसर्स चंदराना ब्रदर्स और मैसर्स अमी ट्रेडर्स दोनों का स्वामित्व एक ही व्यक्ति के पास है। यह आरोप लगाया गया है कि प्रत्यर्थियों 3 और 4 द्वारा "अपने अवैध कार्यों को सही ठहराने के लिए अनुचित प्रभाव या गलत बयानी करके" उनसे शपथपत्र और दस्तावेज प्राप्त किए गए हैं। यह प्रदर्शित करने के लिए कई कारकों की ओर इशारा किया गया है कि उक्त शपथपत्र अपने आप में झूठे और तथ्यात्मक स्थिति के विपरीत हैं। इसके बाद यह बताया जाता है कि जब आपूर्ति की गई वस्तुओं के चालान मूल्य और प्रभार्य उपकर पर भरोसा करके एच.एस.डी. के लिए ब्रांड दर की शुल्क वापसी तय की जा सकती है, तो तिल के लिए ब्रांड दर तय करने में कोई

कठिनाई नहीं थी, जिसे "मानद निर्यात" माना जा सकता है। यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा पहले से प्राप्त भुगतानों को देखते हुए, इसके बैंकर एस.बी.आई. ने याचिकाकर्ता की वाणिज्यिक और वित्तीय व्यवहार्यता का आकलन किया था, ऋण स्वीकृत किए थे और निधियां वितरित किया था। एसबीआई द्वारा विधिवत पुन: पुष्टि किए गए प्रत्यर्थियों की स्पष्ट पुष्टि के साथ भारतीय औद्योगिक विकास बैंक ("आई.डी.बी.आई.") के तनावग्रस्त संपत्ति स्थिरीकरण कोष ("एस.ए.एस.एफ.") द्वारा एकमुश्त भुगतान किया गया था। उक्त भुगतान के अनुसार, शुल्क वापसी के दावों की राशि रु.11.459 करोड़ 60:40 प्रतिशत के अनुपात में एस.ए.एस.एफ. और याचिकाकर्ता के बीच साझे किए जाने थे। तदनुसार यह अनुरोध किया गया था कि प्रत्यर्थियों को वचन-विबंध के सिद्धांतों पर याचिकाकर्ता को मानित निर्यात शुल्क की वापसी की पिछली कार्रवाई से पीछे हटने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए और दो साल से अधिक समय बाद इसकी वापसी की मांग की जानी चाहिए।

14. 29 अक्टूबर 2007 के एक दूसरे अतिरिक्त शपथपत्र द्वारा प्रत्यर्थियों ने याचिकाकर्ता द्वारा नामित दो अन्य डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं के बयान दिए हैं। उन दोनों ने स्पष्ट रूप से कहा कि याचिकाकर्ता को आपूर्ति किए गए तिल गुजरात राज्य के स्थानीय उत्पाद थे।

15. इस बीच याचिकाकर्ता ने सि.वि. सं. 15635/2007 आवेदन दायर किया, जिसमें एस.बी.आई. और एस.ए.एस.एफ. को पक्षकार बनाने और याचिकाकर्ता द्वारा उन्हें बकाया राशि की वसूली के लिए कार्रवाई शुरू करने से रोकने के निर्देश देने की मांग की गई। 16 फरवरी 2008 के आदेश द्वारा एस.बी.आई. और एस.ए.एस.एफ. को पक्षकारों के रूप में शामिल किया गया था। उसी आदेश द्वारा उन्हें हाउस सं. 28 सेक्टर 9ए, चंडीगढ़ में संपत्ति के संबंध में आगे की कार्रवाई करने और बकाया राशि की वसूली के लिए कोई कार्रवाई करने से भी रोक दिया गया था। याचिकाकर्ता को संपत्तियों में स्वामित्व के संबंध में यथास्थिति बनाए रखने का भी निर्देश दिया गया था।

16. याचिकाकर्ता द्वारा विस्तृत लिखित प्रस्तुतियाँ दायर की गई हैं। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री अर्जुन मित्रा और भारतीय प्रत्यर्थी संघ के विद्वान अधिवक्ता श्री एस.के. दुबे की दलीलें बहुत विस्तार से सुना गया।

17. यहां पहले से उल्लिखित प्रस्तुतियों को दोहराने के अतिरिक्त याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि जब तक ई.ओ.यू., डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं से सामान खरीदता है और आयात-आयात नीति के खंड 9.3 के तहत परिभाषित विनिर्माण गतिविधि करता है और उसके बाद तैयार माल का निर्यात करता है, तब तक इस तरह से निर्यात किए गए तिल निर्यात शुल्क वापसी के दावे के

हकदार हैं। चूंकि शुल्क निर्यात संवर्धन की अवधारणा को एक ऐसी मानित भार पर संरचित किया गया है जहां किसी भी वास्तविक शुल्क भार की कोई आवश्यकता नहीं है, इसलिए डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं को वास्तव में माल का आयात करने की कोई आवश्यकता नहीं है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार मानित निर्माण का मुख्य हेतु ईओयू को उसी और समान वस्तु या उत्पाद के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धियों के बराबर रखना है ताकि इसे ऐसी विदेशी वस्तुओं के साथ आयात मूल्य समानता दी जा सके। नो.वि.आ.क्षे. द्वारा 29 जुलाई 2004 को संयुक्त सचिव, वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय को लिखे गए पत्र पर भरोसा किया गया है, जिसमें याचिकाकर्ता के रुख का समर्थन किया गया है कि "भले ही तिल का आयात नहीं किया जाता है, लेकिन जिस मूल्य पर उन्होंने खरीदारी की है वह आयात मूल्य समानता पर आधारित है और इसमें सीमा शुल्क आदि जैसे सभी शुल्क शामिल हैं", इसलिए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि आवेदकों को आपूर्ति किए जाने वाले तिल (तिलहन होने के नाते) के आयात मूल्य में समानता होगी। इसलिए सीमा शुल्क के तहत लागू सीमा शुल्क को शुल्क वापसी के द्वारा अनुमति दी जा सकती है।" जहाँ तक डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं के शपथपत्रों का संबंध है जो प्रत्यर्थियों द्वारा रिकॉर्ड पर रखे गए हैं, यह कहा गया है कि ये झूठे हैं और प्रत्यर्थियों द्वारा ख़रीदे गए हैं। यह

प्रस्तुत किया जाता है कि अस्वीकृति का एकमात्र उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि शुल्क वापसी लाभ का दो बार दावा नहीं किया गया है और यह कहीं भी सुझाव नहीं दिया गया है कि याचिकाकर्ता के अलावा किसी और ने मानित निर्यात शुल्क वापसी का लाभ उठाया है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता बताते हैं कि एकमात्र मुद्दा जिसके लिए आयात-निर्यात नीति के तहत डी.जी.एफ.टी. की ओर से निर्णय लेने की प्रक्रिया की आवश्यकता थी, वह यह था कि क्या ए.आई.आर. लागू हो सकता है। डी.जी.एफ.टी. ने स्वयं वाणिज्य और उद्योग विभाग को सुझाव दिया था कि ई.ओ.यू. को डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं द्वारा तिल के आपूर्तिकर्ताओं को नीति के पैरा 8.2 में दी गई मानित निर्यात की परिभाषा के अनुसार मानित निर्यात लाभ के रूप में दर्ज किया जा सकता है। उस मामले में मानित निर्यात लाभ ("डी.बी.के.") नीति के पैरा 8.3 के संदर्भ में स्वीकार्य होगा और इसका दावा ई.ओ.यू. द्वारा नीति के पैरा 6.11 के संदर्भ में डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं द्वारा अस्वीकृति के आधार पर भी किया जा सकता है। इसके अलावा, यदि तिल जैसे उत्पाद पर कोई ए.आई. दर मौजूद नहीं है, तो विकास आयुक्त, नो.वि.आ.क्षे. डी.बी.के. नियमों के तहत स्वीकार्य सभी लागू शुल्कों (सीमा शुल्क/उत्पाद शुल्क), शुल्क, उपकर आदि की वापसी के लिए एक ब्रांड दर तय कर सकता है।" यह प्रस्तुत किया जाता है कि प्रत्यर्थियों द्वारा

विदेश व्यापार नीति (एफ़.टी.पी.) को लागू करने का प्रयास, जो केवल संभावित रूप से लागू था, और मानित निर्यात शुल्क वापसी के लाभ से इनकार करना, जिसके लिए याचिकाकर्ता वैध रूप से हकदार था, अन्यायपूर्ण और मनमाना था। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने ***एग्री ट्रेड इंडिया सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत संघ 132 (2006) डी.एल.टी. 500*** में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है।

18. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित होते हुए श्री एस.के. दुबे ने बताया कि याचिकाकर्ता समय-समय पर अपना रुख बदलता रहा है। आयात-निर्यात नीति को उत्पाद शुल्क और सीमा शुल्क कानून के तहत समझी गई "शुल्क वापसी" की अवधारणा के अनुरूप पढ़ा और व्याख्या किया जाना चाहिए। किसी निर्यात या आयात की अभिगृहीत कल्पना को संबंधित कानूनों के तहत मूल अवधारणा से परे जाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। **पी. रामनाथ अय्यर** की **द लॉ लेक्सिकॉन** सेकेंड एडिशन (1999 पुनर्मुद्रण पृ. 594) में दी गई “शुल्क वापसी” की परिभाषा पर भरोसा करते हुए उन्होंने बताया कि शुल्क वापसी का तात्पर्य यह है कि जिस वस्तु के संबंध में इसे दिया जाता है, वास्तव में उस पर शुल्क भार लगाया जाता है। यदि यह स्थानीय रूप से निर्मित है तो इस पर उत्पाद शुल्क लगाया जाना चाहिए था और यदि इसका आयात किया जाता है तो इस

पर सीमा शुल्क लगाया जाना चाहिए था। इस संबंध में वह ***उत्तर प्रदेश राज्य बनाम दिल्ली क्लॉथ मिल्स (1991) 1 एस.सी.सी. 454*** में दिए गए निर्णय पर भी भरोसा करते हैं। यह प्रस्तुत किया गया कि तिल स्थानीय स्तर पर खरीदी जाने वाली एक विपणन योग्य उपज होने के कारण संभवतः उत्पाद शुल्क नहीं लगाया गया होगा। चूंकि याचिकाकर्ता ने जिन व्यापारियों से तिल खरीदे हैं, उनके शपथपत्र ने पुष्टि की है कि ये आयातित नहीं थे, इसलिए तिल पर सीमा शुल्क लगाने का कोई सवाल ही नहीं था। उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि किसी भी समय याचिकाकर्ता प्रत्यर्थियों को संतुष्ट नहीं कर सका कि प्रश्नगत तिल पर कोई शुल्क-भार लगा था और चूंकि यह मूलभूत आवश्यकता थी, इसलिए याचिकाकर्ता को मानित निर्यात शुल्क वापसी की अनुमति देने का कोई सवाल ही नहीं था।

19. संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए इस न्यायालय द्वारा न्यायिक समीक्षा के दायरे को देखते हुए, विचारार्थ जो मुद्दा उत्पन्न होता है, वह यह है कि क्या याचिकाकर्ता को दिए गए मानित निर्यात शुल्क वापसी के लाभ को वापस लेने की मांग में प्रत्यर्थियों की कार्रवाई न्यायसंगत, निष्पक्ष और उचित थी। प्रत्यर्थियों का निर्णय कुछ प्रासंगिक सामग्री पर आधारित होना चाहिए था जिसके आधार पर उसने याचिकाकर्ता को दिए गए

मानित निर्यात शुल्क वापसी के लाभ को वापस लेने का निर्णय लिया। आनुषंगिक प्रश्न यह है कि क्या लाभ वापस लेने का निर्णय प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के पर्याप्त अनुपालन से पहले किया गया था। दूसरे शब्दों में, क्या याचिकाकर्ता को अपना पक्ष रखने का पर्याप्त अवसर दिया गया था, जिस पर तब विचार किया गया था।

20. आयात-निर्यात नीति के प्रासंगिक खंडों की प्रयोज्यता पर बहुत तर्क दिए गए हैं। आयात-निर्यात नीति के धारा 6.12 (क) का प्रासंगिक भाग, जिस पर काफी भरोसा किया गया है, नीचे दिया गया हैः

> "डी.टी.ए. से ई.ओ.यू./ई.एच.टी.पी./एस.टी.पी. इकाइयों को आपूर्ति "मानित निर्यात" के रूप में माना जाता है और डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ता आपूर्तिकर्ता पर ई.पी., यदि कोई हो, के निर्वहन के अलावा नीति के अध्याय 8 के तहत प्रासंगिक हक के लिए पात्र होगा। उपरोक्त के बावजूद, ई.ओ.यू./ई.एच.टी.पी./एस.टी.पी. इकाइयाँ, डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ता से एक उपयुक्त अस्वीकरण प्रस्तुत करने पर, नीति के अध्याय 8 में निर्दिष्ट पात्रता प्राप्त करने के लिए पात्र होंगी। मानित निर्यात शुल्क वापसी का दावा करने के उद्देश्य से, वे डी.जी.एफ.टी. द्वारा तय ब्रांड दरें प्राप्त करेंगे जहां शुल्क वापसी की सभी उद्योग दरें उपलब्ध नहीं हैं। इसके अलावा ई.ओ.यू./ई.एच.टी.पी./एस.टी.पी. इकाइयाँ निम्नलिखित की हकदार होंगी.....

आयात-निर्यात नीति के खंड 8.2 (ख) में प्रावधान है कि मुख्य/उप-ठेकेदारों द्वारा वस्तुओं की आपूर्ति की निम्नलिखित श्रेणियों को "मानित निर्यात" माना जाएगा बशर्ते कि माल भारत में निर्मित हों:

> "(ख) निर्यात उन्मुख इकाइयों (ईओयू) या सॉफ्टवेयर प्रौद्योगिकी पार्कों (एसटीपी) या इलेक्ट्रॉनिक हार्डवेयर प्रौद्योगिकी पार्कों (ईएचटीपी) या जैव प्रौद्योगिकी पार्कों (बीटीपी) को माल की आपूर्ति।

21. खंडों के लिए आवश्यक है कि ई.ओ.यू. को, मानित निर्यात शुल्क वापसी का दावा करने के प्रयोजनों के लिए, "डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ता से एक उपयुक्त अस्वीकरण" प्रस्तुत करे। दावे का आधार ही अस्वीकरण प्रमाण पत्र है। मौजूदा मामले में प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत किए गए पर्याप्त दस्तावेज यह दिखाने के लिए हैं कि डी.टी.ए. में वही व्यापारी जिनसे याचिकाकर्ता ने तिल खरीदने का दावा किया है, ने कहा है कि इस तरह के स्टॉक का आयात नहीं किया गया था। ए.पी.एम.सी., राजकोट के साथ-साथ इन व्यापारियों के पत्र से संकेत मिलता है कि तिल स्थानीय रूप से बहुतायत में उगाए जाते हैं। तिल आयात करने का कोई अवसर ही नहीं था। यह याचिकाकर्ता के रुख से पूरी तरह से भिन्न है कि माल का आयात किया गया था।

22. दावे के संवितरण के समय, 27 अक्टूबर 2004 को, याचिकाकर्ता ने निम्नलिखित घोषणा कीः

"<u>घोषणा</u>

हम, सेसमी फूड्स प्राइवेट लिमिटेड, 807, अंसल भवन, 16, कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-110001 पुष्टि करते हैं किः

1. हमें डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं द्वारा तिल के लिए ली गई कीमतों की पुष्टि उनके 5 और 9 जुलाई के पत्र के अनुसार प्राप्त हुई है (प्रति संलग्न)।

2. आपूर्तिकर्ताओं ने पुष्टि की है कि खरीद के समय लागू होने वाले सभी उद्ग्रहणों, **सीमा शुल्कों**, उपकर आदि के भार पर उनके द्वारा लगाए गए मूल्यों में विधिवत विचार किया गया है। केवल लागू होने वाले स्थानीय कर ही चालान में अलग से दर्शाए गए हैं।

3. हम एतद्द्वारा **पुष्टि करते हैं कि हमारी जानकारी और विश्वास के अनुसार डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं द्वारा हमें दिए गए चालानों में लगाए गए मूल्यों को सभी उद्ग्रहणों, सीमा शुल्कों, उपकर आदि की भारों को शामिल करने के बाद तय की गई है।"**

(जोर दिया गया)

23. इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि याचिकाकर्ता प्रत्यर्थियों को यह विश्वास दिलाने के लिए प्रेरित कर रहा था कि डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं ने तिल

का आयात किया था और सीमा शुल्क का भुगतान किया था जो बाद में उनकी कीमत में शामिल किया गया था। याचिकाकर्ता 9 नवंबर 2005 के अपने पत्र में भी इस रुख पर कायम रहा, जिसमें उसने दावा किया था कि देश पर्याप्त स्वदेशी वस्तुओं का उत्पादन नहीं करता है और निश्चित रूप से आयात पर निर्भर है, जिससे यह सुझाव मिलता है कि जिस तिल के संबंध में शुल्क वापसी का दावा किया गया था, वह आयात किया गया था। फिर हमारे पास 21 अप्रैल 2006 को वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय को लिखा गया याचिकाकर्ता का पत्र है जिसमें कहा गया था कि "हम आयातित तिल पर दावे की प्रासंगिक अवधि के लिए और विभाग की पूरी संतुष्टि के लिए शुल्क का प्रमाण प्रस्तुत करने के लिए तैयार हैं।" 24. स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ता के उपरोक्त रुख को ए.पी.एम.सी. राजकोट और स्वयं डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं के बाद के पत्रों द्वारा अपुष्ट दिखाया गया है। हालाँकि यह प्रस्तुत किया गया था कि लाभ वापस लेने का निर्णय इन पत्रों के आधार पर नहीं था, जो बाद में आए थे, लेकिन तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता इस बात का प्रमाण दिखाने में असमर्थ था कि माल पर सीमा शुल्क लगाया गया था, हालाँकि उसने 21 अप्रैल 2006 के अपने पत्र द्वारा ऐसा करने का दायित्व लिया था। यह न्यायालय संतुष्ट है कि याचिकाकर्ता को निर्यात शुल्क की वापसी के लिए अपने दावे को सही ठहराने के लिए कई अवसर प्रदान किए जाने के

बावजूद, वह ऐसा करने में विफल रहा। उस सीमा तक प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पर्याप्त अनुपालन किया गया है।

25. याचिकाकर्ता के लिए दूसरी बड़ी कठिनाई यह है कि मानित निर्यात शुल्क वापसी का दावा करने के लिए उसके द्वारा प्रस्तुत अस्वीकरण प्रमाणपत्रों की सत्यता को प्रथम दृष्टया संदिग्ध दिखाया गया है। डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं के 31 जनवरी 2007 के शपथपत्र से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि उन्होंने ऐसे प्रमाण पत्र तैयार नहीं किए थे। यद्यपि याचिकाकर्ता ने शपथपत्रों पर सवाल उठाया है जिसमें दावा किया गया है कि ये प्रत्यर्थियों द्वारा "प्राप्त" किए गए थे, न्यायालय को अपने रिट अधिकारिता में केवल यह जांच करनी है कि क्या यह याचिकाकर्ता को दिए गए शुल्क वापसी के लाभ को वापस लेने के प्रत्यर्थियों के फैसले को उचित ठहराने वाली प्रासंगिक सामग्री थी। उस प्रश्न का उत्तर मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में सकारात्मक होना चाहिए।

26. याचिकाकर्ता ने दलीलों के दौरान अपने रुख को बदलने की कोशिश की है ताकि यह आग्रह किया जा सके कि डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं द्वारा आपूर्ति की गई वस्तुओं को आयात करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह केवल एक "मानित निर्यात" था और डी.टी.ए. आपूर्तिकर्ताओं द्वारा ई.ओ.यू. को आपूर्ति तदनुसार "मानित आयात" थी। यह न्यायालय इस तर्क को स्वीकार करने में

असमर्थ है। सबसे पहले, याचिकाकर्ता को उनकी सुविधा के अनुसार कानून की आवश्यकता के बारे में अपने रुख को बदलने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। यदि यह प्रत्यर्थियों के समक्ष रखा गया है, और संदर्भित दस्तावेजों से पता चलता है कि यह वास्तव में था, कि प्रश्नगत माल आयात किया गया था, तो इसे उस मामले को ठीक करना होगा। स्पष्ट रूप से प्रत्यर्थियों को यह विश्वास दिलाया गया था कि माल वास्तव में आयातित था। कई अवसरों के बावजूद इस दावे को पूरा करने में असमर्थ होने के बाद, याचिकाकर्ता के लिए अपने दावे के आधार को बदलने की मांग करना खुला नहीं है। प्रत्यर्थियों ने याचिकाकर्ता के दावे को इस आधार पर स्वीकार किया कि प्रश्नगत तिल वास्तव में आयातित नहीं थे। यदि यह तथ्यात्मक रूप से सही है तो याचिकाकर्ताओं के दावों पर विचार करने का आधार सही है।

27. शुल्क वापसी की अवधारणा के बारे में प्रत्यर्थियों के तर्क में काफी दम है। यह इस बात पर लागू होता है कि माल पर अप्रत्यक्ष कर, उत्पाद शुल्क या सीमा शुल्क का कुछ भार पड़ता है। ***उत्तर प्रदेश राज्य बनाम दिल्ली क्लॉथ मिल्स*** (पूर्वोक्त) (एससीसी पृ. 468) में उच्चतम न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियां प्रासंगिक हैं:

> "शुल्क वापसी का अर्थ है वस्तुओं पर पहले से लगाए गए शुल्कों या करों का पुनर्भुगतान है, जिनसे उन्हें निर्यात पर छूट दी जाती है। उदाहरण के लिए, कुछ देशों के सीमा शुल्क कानूनों में सरकार द्वारा आयातित माल पर देय शुल्कों पर छुट दिया जाता है, जब आयातक इसे देश के भीतर बेचने के बजाय फिर से निर्यात करता है, और फिर शुल्क के अंतर को वापस कर दिया जाता है, यदि पहले से ही भुगतान किया गया है।"

28. किसी निर्यात की अभिगृहीत कल्पना को "शुल्क वापसी" की अवधारणा के दायरे से आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है। **इन्टर्प्रिटेशन ऑफ़ स्टैचूट्स (9 वीं संस्करण, 2004)** में जी.पी. सिंह ने कहा हैः

> "विधिक कल्पना बनाने वाले प्रावधान की व्याख्या करते हुए, न्यायालय को यह पता लगाना है कि कल्पना किस उद्देश्य के लिए बनाई गई है, और इसका पता लगाने के बाद, न्यायालय उन सभी तथ्यों और परिणामों को मान लेता है जो कल्पना को प्रभाव देने के लिए आकस्मिक या अपरिहार्य परिणाम हैं। लेकिन कल्पना की ऐसी व्याख्या करते समय इसे उस उद्देश्य से आगे नहीं बढ़ाया जाना चाहिए जिसके लिए इसे बनाया गया है, या उस धारा की भाषा से आगे नहीं बढ़ाया जाना चाहिए जिसके द्वारा इसे बनाया गया है। इसे किसी अन्य कल्पना के सहारे भी नहीं बढ़ाया जा सकता है। और "इस अधिनियम के प्रयोजनों के

> लिए" अधिनियमित शर्तों में एक विधिक कल्पना आम तौर पर उस अधिनियम तक ही सीमित है और इसे किसी अन्य अधिनियम को शामिल करने के लिए विस्तारित नहीं किया जा सकता है।

[***भारत संघ बनाम संपत राज डूगर, ए.आई.आर. 1992 एस.सी. 1417 पृ. 1423*** और ***गार्डन सिल्क मिल्स लिमिटेड बनाम भारत संघ, ए.आई.आर. 2000 एस.सी. 33*** भी देखें]

"शुल्क वापसी" की अवधारणा यह मानती है कि यह एक ऐसे लेनदेन से पहले होता है जिसमें शुल्क, या तो उत्पाद शुल्क या सीमा शुल्क के कुछ भार होते हैं। यदि कृषि आदान जो वास्तव में आयातित नहीं होते हैं, अन्यथा उन पर उत्पाद शुल्क नहीं लगता है, तो ऐसी वस्तु के लिए एआईआर तय करने का सवाल ही पैदा नहीं हो सकता है। एच.एस.डी. के साथ मांगी गई समानता स्पष्ट रूप से गलत धारणा है क्योंकि एच.एस.डी. एक गैर-कृषि वस्तु है जो निर्मित होती है और अन्यथा उत्पाद शुल्क लगाने के अधीन है। जब प्रत्यर्थियों तिल के लिए एआईआर तय करने के लिए आगे बढ़े तो शायद यह मूलभूत अंतर नज़रअंदाज हो गया। याचिकाकर्ता को लाभ प्राप्त करने का एकमात्र तरीका यह दिखाना था कि तिल वास्तव में आयात किए गए थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि क्यों

इसने प्रत्यर्थियों को बार-बार आश्वासन दिया कि वह इस आशय का प्रमाण प्रदान करेगा। और वह ऐसा करने में विफल रहा।

29. उपरोक्त परिस्थितियों में, प्रत्यर्थियों के खिलाफ वचन-विबंध के सिद्धांत को लागू करने का कोई सवाल ही नहीं है। अवैधता के खिलाफ कोई विबंध नहीं है। यदि याचिकाकर्ता वास्तव में निर्यात शुल्क वापसी का दावा करने के लिए कानूनी रूप से हकदार नहीं था, तो वे प्रत्यर्थी को याचिकाकर्ता को गलत तरीके से जारी की गई राशि की वसूली के लिए सुधारात्मक कदम उठाने से नहीं रोक सकते। इसके बावजूद कि याचिकाकर्ता ने बाद में अपने बैंकर और वित्तीय संस्थानों के साथ व्यवस्था की होगी, याचिकाकर्ता को मानित निर्यात शुल्क वापसी जारी करने में अवैधता को उचित या माफ नहीं किया जा सकता है।

30. इस निवेदन में कोई गुणावगुण नहीं है कि प्रतिवादी याचिकाकर्ता के लेन-देन पर पूर्वव्यापी रूप से एफ़.टी.पी. लागू करने की कोशिश कर रहे हैं और इसलिए, आक्षेपित आदेश कानूनी रूप से धारणीय नहीं हैं। जैसा कि आयात-निर्यात नीति के खंडों के आधार पर याचिकाकर्ता के दावे को बनाए रखने के लिए तथ्यात्मक आधार पहले ही देखा जा चुका है, अस्तित्व में नहीं है। याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत अस्वीकरण प्रमाणपत्रों पर बहुत ही गंभीर प्रश्न चिह्न लगा दिया गया है। याचिकाकर्ता यह दिखाने में असमर्थ रहा है कि उन्होंने जो अस्वीकरण प्रमाण पत्र

प्रस्तुत किए हैं, वे वास्तव में विश्वसनीय और वास्तविक दस्तावेज हैं। यह दावा करने के बाद कि प्रश्नगत तिल आयात किए गए थे, याचिकाकर्ता उस दावे को पूरा करने में असमर्थ रहा है।

31. दलीलें समाप्त होने के बाद, याचिकाकर्ता की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता श्री संजय जैन उपस्थित हुए और कहा कि अदालत द्वारा पहले पारित अंतरिम आदेशों को कुछ समय के लिए जारी रखा जाना चाहिए ताकि याचिकाकर्ता अपील दायर कर सके। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, यह न्यायालय इस प्रार्थना को अस्वीकार करता है। इसके बाद यह प्रस्तुत किया गया कि इस याचिका में उठाए गए मुद्दों पर सिविल वाद दायर करने के याचिकाकर्ता के उपाय को खुला छोड़ दिया जाना चाहिए और यह आदेश उन कार्यवाही को प्रभावित नहीं करना चाहिए। जहाँ तक इस याचिका का संबंध है, जबकि याचिकाकर्ता को यदि इस तरह की सलाह दी जाती है, तो वह सिविल वाद के माध्यम से उसके लिए जो भी उपाय उपलब्ध हैं, उनकी मांग कर सकता है, इस अभिवाक को स्वीकार करना संभव नहीं है कि इस न्यायालय का निर्णय (जब तक कि यह उच्च न्यायालय के निर्णय द्वारा पलट नहीं दिया जाता है) उसके समक्ष रखे गए मुद्दों पर और याचिकाकर्ता द्वारा व्यापक तर्क दिया गया है, याचिकाकर्ता को बाध्य नहीं करेगा।

32. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय याचिकाकर्ता को दिए गए मानित निर्यात शुल्क वापसी को वापस लेने के लिए प्रत्यर्थियों द्वारा लिए गए आक्षेपित निर्णयों में कोई कानूनी दुर्बलता नहीं पाता है। याचिका में कोई तथ्य नहीं है और इसे रु.20,000/- की जुर्माने के साथ खारिज किया जाता है जो याचिकाकर्ता द्वारा चार सप्ताह की अवधि के भीतर प्रत्यर्थियों को भुगतान किया जाएगा।

33. सभी अंतरिम आदेश निरस्त किए जाते हैं। आवेदन खारिज कर दिए जाते हैं।

एस. मुरलीधर, न्या.

फरवरी 02,2010
डीएन

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकदमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*